Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 9, June-2019, ISSN 2230-7540

भारतीय हिन्दू संस्कृति एवं उनके विभिन्न पर्व-त्योहार

Manish Kumar[1]* Dr. Chandra Prakash[2]

[1] Research Scholar, R. R. B. M. University, Alwar, Rajasthan

[2] Research Supervisor, R. R. B. M. University, Alwar, Rajasthan

सारांश – हिन्दू संस्कृति में उनके पर्व एव त्योहार का विशिष्ट महत्व है। ये पर्व एवं त्योहार किसी भी श्रेणी में क्यों ना हों उनका बाहय रुप कैसा भी क्यों ना हों किन्तु उनका वास्तविक उद्देश्य जन साधारण में धार्मिक सामाजिक और अध्यात्मिक चेतना का जागृत करना मात्र है। किसी भी देश के पर्व-त्योहार का मात्र यहीं औचित्य है कि इन के द्वारा उनकी वास्तविक संस्कृति के दिग्दर्शन होते है और इसके माध्यम से उस देश की विशेष संस्कृति का एक वास्तविक स्वरुप जन साधारण के सम्मुख प्रकट होता है मानव समाज की सफलता के लिए जहाँ व्यक्तिगत उन्नति और सत्प्रवृत्तियों को ग्राहय करने की आवश्यकता है वहीं सामाजिक संगठन सुदृढ़ बनाना और सामुदायिक सहयोग की भावना का विकास करना भी है। भारतीय संस्कृति में जितने भी पर्व-त्योहार का नियोजन किया गया हैं। उसका एक मात्र उद्देश्य है कि लोग आपस में प्रेमपूर्वक जीवन यापन करते हुए परस्पर सहयोग की भावना को विकसित करें। हमारे देश भारत में पर्वों और त्योहार की परम्परा अति प्राचीन काल से चली आ रही है जो विभिन्न ऋतुओं में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में सभी समुदायों के द्वारा पूर्ण उल्लास और प्रसन्नता के साथ मनाये जाते है। हिन्दू धर्मावलम्बियों के द्वारा मनाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के पर्व-त्योहार का अपना एक अलग महत्व व विशिष्ट पहचान हैं।

संकेत कुँजी – भारतीय हिन्दू संस्कृति अर्थ, परिभाषाएँ, महत्व, विशेषताएँ एवं उनके विभिन्न पर्व – त्योहार

---------------------------------X---------------------------------

भूमिका

हिन्द का रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू है- उसका धार्मिक विश्वास चाहे कुछ भी हो। मुस्लिम आक्रमणों (आठवी शताब्दी) से पूर्व भारत में इसी अर्थ की परम्परा बराबर चलती आ रही थी। जितनी जातियां बाहर से आई, उन्होंने हिन्दुत्व को अपनाया और हिन्दू जाति की मुख्य धारा में समा गई। इस देश में बहुत से परम्परावादी एवं परम्परा विरोधी आन्दोलन भी चले, किन्तु वो सब मिल-जुलकर हिन्दुत्व ही में विलीन हो गए।जैसे हम ब्रहम के लिए "नेति-नेति" कहते हैं, वैसे ही "हिन्दुत्व" के लिए भी हम इतना ही कह सकते है कि यह अमुक मत नहीं है, अमुक पन्थ नहीं है, अमुक वाद नहीं है, अमुक सम्प्रदाय नहीं है - तो फिर, क्या है? बस 'मौंनमेव वरम' इसका कोई स्थिर रूप नहीं है, क्योंकि वह सतत् विकासशील है। यद्यपि इसका हम कोई एक लक्षण नहीं बता सकते तथापि वायु की भांति, हम इसका अस्तित्व खूब अनुभव कर सकते हैं। वस्तुत हिन्दू को परिभाषित करना आकाश की अनन्तता कों नापना है। हिन्दुत्व किसी एक व्यक्ति को पैगम्बर या गुरू नहीं मानता। यह पूर्णरूप से सत्यान्वेशी है। अतः उसे जहां भी कहीं ज्ञानोपलब्धि होती है, उसे अपनाने से नहीं झिझकता। जहाँ-जहाँ वह विभूति, श्री और ऐश्वर्य देखता है, उसी को वह ईश्वर के तेज का अंश समझता है। हिन्दू संस्कृति के इतिहास में सिन्धु नदी की अविस्मरणीय भूमिका है। इस शक्तिशाली, कलकलनिनादनी पावन नदी ने न केवल उनके धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक व नैतिक जीवन पर ही अपनी अमिट छाप छोड़ी है, अपितु उनके देश के नामकरण में भी अपना अक्षय योगदान किया है। पहले सप्तसिन्धु, फिर 'सिन्धु स्थान' और अब 'हिन्दू स्थान' सबमें ही 'सिन्धु' के नाम का प्रताप है। अतः हिन्दू संस्कृति एक विशुद्ध भू-सांस्कृतिक अवधारणा की परिचायक है।

भारतीय राष्ट्रीयता का मूलाश्रय तो, सदा से संस्कृति ही रहा है। इस प्रकार हर भारतीय नागरिक सांस्कृतिक रूप में एक 'हिन्दू' है। संस्कृति के अर्थ को भली भांति समझने के लिए इसका 'सभ्यता' से विभेद करना वांछनीय होगा। लेखकों ने

www.ignited.in

सभ्यता की विभिन्न अवधारणाओं का उल्लेख किया है। ऐसा विचार किया जाता है कि सभ्यता का आरम्भ उस समय हुआ, जब लेखन एवं धातु का आविष्कार हुआ। क्योंकि इतिहास का अरम्भ लेखन के साथ हुआ, अतएव सभ्यता का आरम्भ भी उसी प्रकार हुआ। आगबर्न एवं निमकाफ के अनुसार, सभ्यता अति-जैविक (Super –Organic) संस्कृति का उत्तरीय पक्ष है। कुछ लेखकों ने सभ्यता का आधार नातेदारी अथवा कुलीन संगठन को न मानकर सिविल संगठन को माना है क्योंकि सिविल संगठन बडे नगरों में अधिक पाया जाता था।, अतएव इन नगरों के निवासियों को 'सभ्य' कहा जाने लगा। ए.ए.गोल्डनवीजर (A.A.k. Goldenweiser) ने सभ्यता को 'संस्कृति का समानार्थक माना है तथा इस शब्द का प्रयोग अशिक्षित लोगों के लिए किया। अन्य लेखक 'सभ्यता' शब्द को संस्कृति के कुछ चयनित भाग के लिए प्रयुक्त करते है। ब्रुक्स एडम (Brooks Adam) सभ्यता को अनिवार्य रुप से एक अतिविकसित संगठन मानता है। उसकी अवधारणा में शासकीय सत्ता द्वारा किसी क्षेत्र पर स्थिर व्यवस्था का विचार निहित है। आर्नाल्ड टायनबी (Arnold Toynbee) के विचारानुसार, सभ्यता अनिवार्यतः एक धार्मिक एवं नैतिक प्रणाली है जो राज्य अथवा राष्ट्र से प्रायः विशाल क्षेत्र में प्रचलित है। ऐसी प्रणाली प्रथाओं, संस्थाओं एवं विचारधाराओं द्वारा एकीकृत होती है। कुछ समाजशास्त्रियों का संस्कृति से तात्पर्य मूर्त वस्तुओं, यथा आवासों, लेखन -उपकरणों, रेडियो, वस्त्रों बर्तनों, यन्त्रों, पुस्तकों एवं चित्रों से है। जबकि कानून एवं धर्म सम्मिलित है। गिलिन एवं गिलिन ने 'संस्कृति' शब्द का प्रयोग मूर्त वस्तुओं में अभिलक्षित विचारों एवं प्रविधियों का बोध कराने हेतु किया, जबकि स्वयं वस्तुओं का बोध कराने के लिए उसने 'सांस्कृतिक उपकरण' शब्द को प्रयुक्त किया। उसके अनुसार, सभ्यता संस्कृति का अधिक जटिल एवं विकसित रुप है। मैकाइवर ने 'सभ्यता' शब्द का प्रयोग उपयोगी वस्तुओं, जीवन की स्थितियों को नियन्त्रित करने के लिए मानव द्वारा योजित समस्त संगठन तथा यान्त्रिकता के लिए किया। ये वस्तुयें लक्ष्यों की सिद्धि हेतु साधन रुप में प्रयुक्त होती है। उनकी इच्छा इसलिए की जाती है, ताकि साधनों के रुप में उनका उपयोग करके हम कुछ संतुष्टियाँ प्राप्त कर सकें। इस अर्थ में 'सभ्यता' रेडियों, मतदान-पेटिका, टेलीफोन, रेल की सड़कें, विद्यालयों, बैकों एवं ट्रेक्टर आदि सभी को अन्तर्भूत करती है। ये सभी वस्तुयें सभ्यता के क्षेत्र में आती है। ए. डब्ल्यू. ग्रीन (A.W.k. Green) का विचार है, संस्कृति उसी समय सभ्यता बनती है, जब यह लिखित भाषा, विज्ञान, दर्शन, विशिष्ट, श्रम-विभाजन तथा एक जटिल प्रौद्योगिकी एवं राजनीतिक प्रणाली को अधिकृत कर लेती है।

संस्कृति का अर्थ व परिभाषायें- संस्कृति चूंकि मानवीय समाज की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है और इसका संबंध मनुष्य के जीवन के अनेक पक्षों से है, अतः इसे परिभाषित करना आसान नहीं है। 'संस्कृति' का प्रयोग अनेक विद्वानों ने अनेक अर्थो में किया। ए. एल. क्रोबर एवं क्लुक्खौन ने स्वीकृति की परिभाषाओं का संकलन करके बताया कि इस शब्द की एक सौ आठ परिभाषायें है। 'संस्कृति' शब्द की व्युत्पत्ति 'संस्कृत' से हुई है। 'संस्कृति एवं संस्कृत' दोनों ही संस्कार से बने है। संस्कार का अर्थ है कुछ 'कृत्यों की पूर्ति करना' एक हिन्दू अपने जीवन में अनेक संस्कारों को सम्पन्न करता है। अतः इस दृष्टिकोण से संस्कृति का आशय है विभिन्न संस्कारों द्वारा सामूहिक जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति। संस्कारों को सम्पन्न करके ही एक मानव सामाजिक प्राणी बनता है।

संस्कृति का सामान्य अर्थ आदतों, अभिवृतियों और मूल्यों के न्यूनाधिक संगठित और दृढ़ ताने -बाने से लगाया जाता है जो एक पीढी से दूसरी पीढी को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार संस्कृति में किसी समाज के किसी भाग के लोगों का पारस्परिक व्यवहार, उनके विष्वास और भौतिक वस्तुयें आती हैं। संस्कृति को लेखकों द्वारा विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया गया है। कुछ विचारक संस्कृति में उन सभी तत्वों को सम्मिलित करते है जो मनुष्यों को समाज में परस्पर संयुक्त करते है। कुछ लेखक संकुचित अर्थ लेते हैं और इसमें केवल अभौतिक अंगों को ही लेते है। इसकी परिभाषायें निम्न है-

टायलर के अनुसार- "संस्कृति एक ऐसा जटिल समग्र है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, कानून, प्रथा तथा समाज के सदस्य के रुप में मनुष्य द्वारा अर्जित अन्य दूसरी समर्थतायें सम्मिलित हैं।"

मैलिनाव्स्की के अनुसार- "संस्कृति मनुष्य की कृति है तथा एक साधन है जिसके द्वारा वह अपने लक्ष्यों की प्राप्ति करता है।"

रैडफील्ड के अनुसार- "संस्कृति ऐसे परम्परागत विश्वासों के संगठित समूह को कहते है जो कला एवं कलाकृतियों में प्रतिबिम्बित होते है तथा जो परम्परा द्वारा चलते रहते हैं और किसी मानव-समूह की विशेषता को चित्रित करते हैं।"

जोसेफ पाईपर- के अनुसार- "संस्कृति संसार की सभी भौतिक वस्तुओं तथा उन उपहारों एवं गुणों का सार है जो मनुष्य की सम्पत्ति होते हुए भी उसकी आवश्यकतओं एवं इच्छाओं के तात्कालिक क्षेत्र से परे है।"

सी.सी. नार्थ के अनुसार- “संस्कृति में मनुष्य द्वारा निर्मित वे उपकरण सम्मिलित हैं, जो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायता करते है।”

ई.वी.डी. राजर्टी के अनुसार- “संस्कृति विचार एवं ज्ञान दानों, व्यवहारिक एवं सैद्धांतिक का समूह है जो केवल मनुष्यों के पास ही हो सकता है।”

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्षतः कह सकते है कि संस्कृति भौतिक और अभौतिक तत्वों की वह जटिल सम्पूर्णता है जिसे हम समाज का सदस्य होने के नाते प्राप्त करते है और जिसमें रहते हुए हम अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करते है।

संस्कृति का महत्व

संस्कृति का व्यक्ति के लिए महत्व

व्यक्ति के लिए संस्कृति का मूल्य अपार और असीमित है। संस्कृति व्यक्ति के सामाजिक जीवन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है, संस्कृति व्यक्तित्व का विकास करती है, उसका संस्कृतिकरण करती है। व्यक्ति के लिए संस्कृति के महान् कार्यों अथवा लाभ को हम सार रुप में इस प्रकार रख सकते है।-

1. **संस्कृति व्यक्तित्व के अध्ययन का केन्द्र-बिन्दु है -** नेतृत्व विज्ञानी के लिए मानव जाति की समूची विरासत संस्कृतिकरण करती है। जबकि एक संस्कृति कुछ विशेष लोगों की सामाजिक विरासत की द्योतक है अस्तित्व-संस्कृति का संबंध सब समाजशास्त्रियों, सामाजिक नेतृत्व-वैज्ञानिकों और सामाजिक मनोवैज्ञानिकों के लिए प्राथमिक महत्व का विषय है। संस्कृति और व्यक्तिव के मध्य जो संबंध है, उसमें दो बातें निहित है-एक ओर व्यक्ति को उपलब्ध होने वाला सामाजिक विरासत उसके प्रति चेतन और अचेतन रुप में उसकी अनुक्रिया होती है और दूसरी और विशिष्ट व्यक्ति का समग्र चरित्र। संस्कृति का रुप मूलतः व्यक्तियों की व्यापक रचनाओं को निर्धारित करता है कि किसी भी संस्कृति के संरुप का प्रमाण देते हैं और उेस स्थायी बनाने का प्रयास करने में कार्य करते है।

2. **संस्कृति मनुष्य को मानव बनाती है -** संस्कृति -विहिन व्यक्ति पशु के समान है। वह संस्कृति ही है जो मनुष्य को मानव बनाती है, उसके आचरण को नियमित करते हुए समूह -जीवनयापन के लिए तैयार करती है। मानव कहलाने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य सांस्कृतिक धारा में प्रवाहित हो। संस्कृति मनुष्य के समक्ष उसके जीवन का एक पूरा ‘डिजाइन’ प्रस्तुत करती है। यह मनुष्य को बताती है कि वह किस प्रकार का भोजन करें। किस प्रकार के वस्त्र पहने, अपने साथियों के साथ कैसा व्यवहार करें, लोगों से कैसे बातचीत करे और दूसरों के साथ किस तरह सहयोग या प्रतियोगिता करे। समाज में जीवन कैसे बिताए-यह संस्कृति ही सिखाती है। सामाजिक जीवन निभाने के लिए जो भी गुण अपेक्षित हैं, मनुष्य को उसकी संस्कृति से मिलते है।

3. **संस्कृति व्यक्तित्व का विकास करती है-** ‘संस्कृतिकरण’ द्वारा व्यक्ति अपनी संस्कृति के तत्वों को अपनाता है। इस प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति अपने शारीरिक-मानसिक विकास की क्रमिक स्थितियों में अपनी स्थिति और कार्यों के अनुकूल सामान्यकों को आत्मीकृत करता है। इस तरह उस विचार, व्यवहार और कार्यों के सामाजिक औचित्य का मानदण्ड मिल जाता है, और वह संस्कृति की स्वीकृत धाराओं में अपना स्थान पा जाता है। इस तरह व्यक्ति एक ओर मानव और समाज तथा दूसरी ओर मानव और अदृष्य जगत् के पारस्परिक संबंधों में अपना स्थान निर्धारित करता है साथ ही मानव और प्रकृति के संबंधों के अन्तर्गत आने वाला आवश्यक विचार, व्यवहार और कार्य-प्रकारों से अपने अनुकूल सामान्यकों की उपलब्धि भी उसे होती है।

4. **संस्कृति जटिल स्थितियों का समाधान प्रस्तुत करती है-** संस्कृति मनुष्य को जटिल स्थितियों के समाधान हेतु व्यवहार का ढंग प्रस्तुत करती है। यह मनुष्य को इतना अधिक प्रभावित किए रहती है कि उसे स्वयं को सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप रखने में किसी बाह्य शक्ति की आवश्यकता नहीं होती। उसके कार्य स्वाभाविक बन जाते है।

5. हिन्दू संस्कृति की महत्ता को प्रकट करने वाली कविता की कुछ पंक्तियां इस प्रकार से है जिससे इस संस्कृति श्रेष्ठता का पता स्वतः ही लग जाता है:-

हिन्दू-सनातन धर्म के ऐसे पवित्र विधान हैं,

संसार में सबके लिए जो मान्य एक-समान है।

विख्यात हिन्दू धर्म ही सच्चा सनातन धर्म है,

वह धर्म ही 'धारण' क्रिया का नित्य कर्ता कर्म हैं।"

संस्कृति का समूह के लिए महत्व

जिस प्रकार व्यक्ति के लिए संस्कृति के कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, उसी प्रकार समूह के लिए भी संस्कृति अनके दृष्टियों से उपयोगी है-

1. **संस्कृति व्यक्ति के दृष्टिकोण को व्यापक बनाकर सामूहिक भावना उत्पन्न करती है-** संस्कृति व्यक्ति के दृष्टिकोण को उदार और व्यापक बनाती है, उसे अपने लिए ही नहीं वरन् दूसरों के लिए सोचना सिखाती है और व्यक्ति को इस बात का प्रशिक्षण देती है कि वह स्वयं को एक विशाल मानव समूह का अंग समझे। संस्कृति व्यक्ति को परिवार, राज्य, वर्ग आदि की अवधारणाओं से परिचित कराती है, समन्वय और श्रम-विभाजन को सम्भव बनाती है, व्यक्तियों के सहयोग हेतु नियमों की व्याख्या द्वारा व्यक्ति को नई दृष्टि देती है।

2. **संस्कृति सामाजिक संबंधों को बनाए रखने में सहयोग देती है-** संस्कृति के अभाव में किसी प्रकार का समूह जीवन सम्भव नहीं है। संस्कृति मूल्यों एवं आदर्शों की स्थापना करती है। यह लोगों के व्यवहार को नियमित करके तथा अनुशासन निवास एवं काम भावना संबंधी प्राथमिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि द्वारा समूह-जीवन को स्थिर रखने में समर्थ होती है। वस्तुतः यदि सांस्कृतिक विनियम न होते तो मनुष्य का जीवन एकाकी, क्षुद्र एवं पशुवत होता।

3. **संस्कृति नवीन आवश्यकताओं को जन्म देती है-** समूह के लिए संस्कृति का एक महत्वपूर्ण कार्य नई आवश्यकताओं और नई प्रेरणाओं को उत्पन्न करना है। संस्कृति ज्ञान-पिपासा को उत्पन्न करती है और आवश्यकताओं की सन्तुष्टि की व्यवस्था करती है। संस्कृति के माध्यम से समूह के सदस्यों की नैतिक, धार्मिक, कलात्मक, सौन्दर्यात्मक और अन्य हितों की सन्तुष्टि होती है। सांस्कृतिक संघ हमें क्लब, थियेटर चर्च-समूह, परिवार आदि के प्राथमिक केन्द्रों की ओर ले जाता है। सांस्कृति संघ में सांस्कृतिक और सामाजिक तत्व मिश्रित होते है जिनसे हमारी अनेक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि होती है। मानव -समूह संस्कृति की रीढ़ है और सांस्कृतिक मूल्यों में किंचित् भी परिवर्तन न केवल व्यक्तित्व वरन् समूह संरचना को भी प्रभावित करता है।

भारतीय संस्कृति की विशेषतायें

वेदों के केवल सामाजिक विचार ही नहीं हैं बल्कि तत्कालीन संगीत, कला और वाद्ययन्त्रों की भी चर्चा की गई है। यजुर्वेद ने वाद्ययन्त्रों की व्यवस्था कर संगीत के संबंध में प्रारम्भिक चर्चा की गई है जो सामवेद में आकर विकसित हो गई है। सम्पूर्ण सामवेद गायन के सिद्धान्तों के आधार पर रचित है। अरविन्दों के उद्धृत उक्त विचारों से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय वैदिक कालीन युग आध्यात्मिक रुप से अत्यन्त विकसित था और सारे चिन्तन का आधार धर्म और आत्मा से संबंधित था। सामाजिक संस्थाओं से संबंधित विचार भी इतने ही महत्वपूर्ण तरीके से किए गये है। भारतीय कालीन संस्कृति की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. **धार्मिक विचार -** वैदिक धर्म केवल अलौकिक और पारलौकिक नहीं बल्कि लौकिक और सामाजिक भी है। इन ग्रन्थों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति जो भी कार्य करता है वह परिवार, समाज एवं राष्ट्र के लिये करता है। व्यक्ति, परवार और समाज के पोषण के लिए नियमोचित रुप से किये गये कर्मों को ही धर्म कहा जाता है। इन विचारों में नैतिकता का स्थान प्रधान है, जिसमें दूसरों के प्रति दया, सत्य, भाषण एवं सज्जनता पर विशेष ध्यान दिया गया है। व्यक्ति को अपने परिवार, पितृ, गोत्र, नदियों तथा अन्य देवी-देवताओं के प्रति किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिये, इसका विषद वर्णन वेदों से मिलता है। ऋग्वेद में राष्ट्रीयता संबंधी जो विचार प्रकट किये गये हैं, उनसे तत्कालीन भारत का मानचित्र उपस्थित किया गया है।

"इमं में गंगे यमुने सरस्वती षुतुद्रि स्तोम सचता परुष्णाया।

असिकन्धा मखद्वृधे वितस्ययार्जीकीये सृणुहृया सुषेमया।।"

इस श्लोक से देशभक्ति की भावना को भी बल मिलता है। इस धरती माँ को समस्त द्रश्य वस्तुओं का दाता मानना और इसी दृष्टि से विचार करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य

www.ignited.in

माना गया है इसीलिए इस भू-भाग की नदियों, समुद्रों, पर्वतों और तीर्थ स्थानों को स्मरण करना प्रार्थना के लिये आवश्यक है।

2. **सामाजिक संस्थाओं संबंधी विचार** - संस्थाओं का आरम्भ मानव संगठनों के आरम्भ से माना जाता है जो विचारों और सभ्यता के विकास के साथ और भी जटिल होते जाते हैं कूले ने इसे "सार्वजनिक मस्तिष्क का एक निश्चित और स्थापित स्वरुप" माना है। वैदिक काल में सामाजिक संस्थाओं से संबंधित विषद चर्चा की गई है। इसमें मुख्य रुप से आश्रम व्यवस्था, वर्ण-व्यवस्था, पारिवारिक, विवाह और सन्तानोत्पति आदि संस्थायें आती है।

3. **आश्रम व्यवस्था -** वैदिक कालीन विचारकों ने मनुष्य के जीवन को चार उपविभागों यथा बचपन, किशोरावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था के रुप में किया है। वैदिककालीन व्यवस्था में इसे आश्रम व्यवस्था कहते है।

4. **वर्ण व्यवस्था -** आज जिसे हम जाति व्यवस्था और वर्गीकरण का सिद्धान्त मानते है उसे ही वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था कहा गया। श्रम विभाजन के द्वारा कर्तव्य निर्धारण को सिद्धान्त मानकर वर्ण व्यवस्था की गई है। यह वर्ण व्यवस्था सावयविक सिद्धान्त पर आधारित है। जिस प्रकार मनुष्य का शरीर अलग-अलग काम करता है, उसी प्रकार समाज के व्यक्तियों को भी अलग अलग कर्तव्य करने पड़ते हैं। इस प्रकार की व्यवस्था वैदिक काल में देखने को मिलती है।

5. **विवाह, परिवार और संतानोत्पत्ति -** वैदिककाल में पितृसत्तात्मक परिवारों को ही मान्य परिवार व्यवस्था मानी जाती रही है जिसे 'कुल' की संज्ञा दी गई है। पिता कुल का मुखिया माना गया तथा प्रधान गुरु। कुल की प्रथा के अनुसार सोलह संस्कार माने गये, जिसमें विवाह एक संस्कार हैं यह दो विषमलिंगी व्यक्तियों का स्थायी मिलन माना गया है। परिष्कार गृह सूत्र में पति पत्नि के संयोग को एक मौलिक सामाजिक मूल्य माना गया है, जिसमें पति-पत्नि और पत्नि -पति से कहती है, "मैं अपनी सांस तुम्हारी सांसो से, अपनी हड्डियों को तुम्हारी हड्डियों से, अपना मांस तुम्हारे मांस से और अपना चमड़ा तुम्हारे चमडे से मिला रही हूँ। "इस प्रकार का विवाह अनुबन्ध नहीं वरन् एक पवित्र सामाजिक एवं धार्मिक कृत्य माना जाता है। सन्तानोत्पति भी धार्मिक कृत्य है जिसमें व्यक्ति पितृऋण से मुक्त हो पाता है।

6. **वैदिक कालीन राज्य व्यवस्था-** वैदिक काल में राज्य व्यवस्था और राजधर्म पर विषद चर्चा की गई है। राजा, मंत्री तथा प्रजा के अलग-अलग, एक दूसरे के प्रति और ईश्वर के प्रति क्या कर्तव्य होते है। इस बात की विस्तृत चर्चा ऋग्वेद, अथर्ववेद, तैत्तरेय, संहिता आदि ग्रन्थों में की गयी है। वैदिक ऋचाओं में सर्व सत्ता सम्पन्न एक राज की व्यवस्था दी गई है। जिसके लिए अधिराजा, राजाधिराज सम्राट आदि की संज्ञा दी गई है। इसी प्रकार शुक्रनीति में नृपति, सामन्त, राजा, महाराजा, सार्वभौम, विराट आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। "आसमुद्राज्ञीतिषः" राजा सबसे बडा माना जाता है जो एतरेय ब्राह्मण के अनुसार, "प्राकृतिक सीमाओं, अविभाजित सीमा तथा समुद्रों पर" शासन करता है। यजुर्वेद की व्यवस्था से पता चलता है कि वैदिक काल में गणतान्त्रिक व्यवस्था थी। बाद में राज जन्मना होने लगा जिसने तानाशाही या राजतन्त्र का रुप धारण कर लिया।

इस प्रकार वैदिक कालीन चिन्तन का आरम्भ मनुष्य की उस अवस्था से होता है, जहाँ वह बर्बरता से आगे बढकर सामाजिक प्राणी बना, व्यक्तिगत स्वार्थ से अलग सामाजिक स्वार्थ को मानने लगा, आखेट, और गरीबी से आगे 'संग्रह' 'सम्मान' और 'संगठन' की इच्छा से प्रेरित हुआ। इस विकास की मूल प्रवृत्तियों को आधार बनाकर मनुष्य में विकसित होने की इच्छा जाग्रत हुई और उसने अपना चिन्तन इस ओर किया और सामाजिक विचारों का प्रतिपादन किया।

पर्व-त्योहार की महत्ता

किसी भी देश की सांस्कृतिक चेतना का विस्तार उस देश में आयोजित होने वाले पर्व-त्योहार-उत्सवों की आवृत्ति पर निर्भर करता है। सांस्कृतिक पर्व हो या कोई लोक पर्व - मेला, व्रत त्योहार सभी में संस्कृति के संस्कार प्रतिबिम्बित होते हैं। ये पर्व त्योहार ही किसी देश-विदेश की संस्कृति के प्रतीक होते हैं क्योंकि इन्हीं के माध्यम से उस देश विशेष की संस्कृति की विशेषताएँ, आचर-विचार, रहन-सहन, जीवन के प्रति दृष्टिकोण, सामाजिक अंतर सम्बन्धों की गरिमा ही नहीं अपितु प्रकृति पर्यावरण के प्रति गहरी आस्था एवं संवेदनशीलता भी परिलक्षित होती है। हिन्दुओं के लिए पर्व,

उत्सव एवं त्योहार उनके जीवन में नवीन हर्षोल्लास लाने के साथ-साथ उन्हें सुमार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करने वाले सिद्ध हुए हैं।

भारत एक बहु धर्मी एवं बहुभाषी देश है जहाँ पर सभी धर्मो को मानने वाले लोग निवास करते है तथा सौहार्द्र का वातारण बनाने का प्रयास करते है। सभी धर्मो के अपने-अपने रीति रिवाज, रस्म व त्योहार होते है जिन्हें सभी धर्मो के लोग मिलकर हर्षोल्लास के साथ मनाते है। ये पर्व और त्योहार समाज को जीवन्तता प्रदान करते है, विविधता में एकता भाव उत्पन्न करते है। परिवारों एवं सामाजिक संस्थाओं में इन त्योहार को उत्साह पूर्वक मनाया जाता है। इनको मनाने के पीछे दृष्टि यही है कि समाज के लोग पर्व एवं त्योहार के माध्यम से हमारी सभ्यता एवं संस्कृति को समझकर देश भावनात्मक एवं राष्ट्रीय एकता को सुदृढ बनाने में अपनी संकारात्मक भूमिका का निर्वहन कर सके। विद्यार्थियों को भी विद्यालयों में इन त्योहार से जोडा जाता है ताकि उनमें बाल अवस्था से ही इन गुणों का विकास किया जा सके।

हिन्दू-धर्म में पर्व और धार्मिक त्योहार का इतना बाहुल्य है कि उनके लिये जनता में सात बार और नौ त्योहार की कहावत प्रचलित हो गई है। यदि खोज और विचार करके देखा जाय तो इस में वास्तव में प्रत्येक तिथि और बार को पर्व माना गया है और उसे मनाने के लिये विशेष धार्मिक विधान भी बतलाया है। इनके सिवाय देवताओं, अवतारों, महापुरूषों की स्मृति अथवा जयन्ती के लिये भी त्योहार नियत किये गये है। कुछ अन्य पर्व जैसे संक्रान्ति, ग्रहण, कुम्भ आदि आकाशस्थित ग्रहों के योग और उनसे पृथ्वी पर पड़ने वाले शुभाशुभ प्रभाव को दृष्टिगोचर रखकर मनाये जाते हैं।

धर्म और आध्यात्मिकता के भावों की वृद्धि के साथ ही धार्मिक और सामाजिक त्योहार का एक दूसरा बड़ा उद्देश्य सामूहिक की वृद्धि करना भी है। जो त्योहार या उत्सव किसी प्राचीन महापुरूष या अवतार की जयन्ती के रूप में मनाये जाते हैं उनका एक बहुत बड़ा लाभ यह होता है कि जनता को उनके द्वारा सच्चरित्रता, नैतिकता, सेवा, सद्भावना आदि की शिक्षा मिलती है। इस प्रकार के उत्सव संसार के सभी देशों में मनाये जाते है, और इस बात का ध्यान रखा जाता है कि जन साधारण अपने उन महान् पूर्वजों से उच्च कोटि के सद्गुणों की प्रेरणा प्राप्त करें। वास्तव में जिस जाति के यहाँ ऐसे-ऐसे महापुरूषों का अभाव है, वह उन्नति की आशा नहीं रख सकती क्योंकि साधारण मनुष्य के लिए बिना किसी मार्ग-दर्शक अथवा प्रकाशस्तम्भ के संसार में सफलतापूर्वक अग्रसर हो सकना सम्भव नहीं है। यही कारण है कि उन्नति की कामना रखने वाली जातियाँ अपने पूर्व पुरूषों के चरित्रों और महान् कार्यों को बडे गौरव के साथ याद करती है।

हिन्दुओं के प्रमुख त्योहार

1. **नवरात्रा:-** साल में दो बार नवरात्रा मनाये जाते हैं। जिन्हें चैत्र एवं आश्विन नवरात्र के नाम से जाना जाता है। चैत्र नवरात्र चैत्र सुदी प्रतिपदा से नवमी तक नौ देवियों की पूजा की जाती है तथा आश्विन नवरात्र में आश्विन शुक्ला प्रतिपदा से नवमी तक नौ देवियों यथा - महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती या चामुण्डा, योगमाया, रक्तदन्तिका, शाकम्भरी, श्री दुर्गा, भ्रामरी एवं चण्डिका की पूजा करने के साथ व्रत भी रखा जाता है। कहीं-कहीं नवरात्र में रात भर लीला भी हुआ करती है। जैसे-गुजरात तथा महाराष्ट्र इत्यादि में।

2. **गणगौर व्रत:-** यह सौभाग्यप्रद व्रत स्त्रियों का महत्वपूर्ण त्योहार है। धर्मशास्त्रों में इसे 'गौरी उत्सव', 'गौरी तृतीया', 'ईश्वर-गौरी' आदि नामों से लिखा गया है। यह त्योहार चैत्र शुक्ल तृतीया को आता है।

3. **अक्षय तृतीया या आखा तीज:-** यह त्योहार बैसाख शुक्ला तृतीया को मनाया जाता है। यह त्योहार लोगों में बहुश्रुत और प्रचलित है। भविष्य पुराण के अनुसार इसमें किये गये सभी कर्मो का फल 'अक्षय' हो जाता है। इसलिए इसका नाम 'अक्षया' हुआ है।

4. **तीज:-** कहावत है- 'तीज त्योहार बावड़ी, ले डूबी गणगौर' तीज का त्योहार श्रावण और भाद्रपद दोनों मासों में मनाया जाता है। श्रावण सुदी तीज का मेला उत्तरी भारत में कई जगह लगता है। तीज की सवारी भी गणगौर की तरह निकलती है। भाद्रप्रद वदी तीज को सत्तू का भोजन करने के कारण इसको 'सातूड़ी' अथवा 'सतवा तीज' भी कहते हैं। यह बूढ़ी तीज भी है। सातुड़ी तीज को विशालाक्षी देवी का पूजन कर गुड़ के पूओं का भोग लगाते हैं।

   कुआँरी कन्याओं में तीज का बड़ा महत्व है। इस दिन झूले झूलना तथा गीत गाना विशेष रूप से किया जाता है पहले दिन सिजारा किया जाता है।

इस त्योहार में मेंहदी लगाने का भी विधान है तथा इन दिनों वर्षा का भी अपना एक महत्त्व होता है।

तीज को इन बातों को त्यागने का विधान है - पति से छल-कपट, परनिन्दा और झूठ बोलना व दुर्व्यवहार। श्रावण शुक्ला तीज के त्योहार पर बिहारी व पूर्वी उत्तर प्रदेश में दिन भर विवाहिताएं अपने पति की सलामती के लिए निर्जला उपवास रखकर रात्रि में शिव की आराधना करती है।

5. **रक्षा बन्धनः-** रक्षा बन्धन ब्राह्मणों का त्योहार माना जाता है। रक्षा बन्धन अर्थात् रक्षा के लिए बन्धन। तात्पर्य है यह कि ब्राह्मण लोग अपनी रक्षा के लिए क्षत्रिय इत्यादि जातियों के बन्धन बांधते हैं और वे इनकी रक्षा का भार अपने कन्धों पर वहन करते हैं।

रक्षा बन्धन का त्योहार प्रत्येक वर्ष श्रावण की पूर्णिमा को मनाया जाता है। इसी कारण कोई इसे श्रावणी पर्व के नाम से भी पुकारते है। श्रावणी के दिन राजा लोग आश्रमाध्यक्ष की पूजा करते हैं और वे उनके हाथों में पीले रंग का सूत्र बांधते हैं। वैसे यह त्योहार भाई-बहिन की पवित्र स्मृति के द्योतक है। ब्राह्मण का भाग तो प्रायः इस दिन के महत्व के कारण गौण हो गया है। स्त्रियां इस बहाने उपने मैके चली जाती हैं तथा अपनी सहेलियों से मिलने का अवसर प्राप्त कर लेती हैं, इस दिन झूला, गाना तथा आमोद-प्रमोद करती हैं। ऐसे सुखदाई अवसरों पर पुत्री अपने माता-पिता के घर से कुछ प्राप्त कर लेती है। तथा उस पर अपना स्तत्व बनाये रखती है। मनुष्य को भी इस ऋतु में व्यायाम के लिए विशेष रुचि उत्पन्न हो जाती है।

स्त्रियां प्रायः इस दिन अपने भाईयों के राखी बांधती हैं तथा उनसे दक्षिणा प्राप्त करती हैं एवं अपने भाई को मिठाई से मुंह मीठा कराती है। रक्षाबन्धन करने वाला व्यक्ति अपने प्राणों को संकट में डालकर राखी की पवित्रता की रक्षा करता है। मध्यकालीन इतिहास के अनुसार माना जाता है कि हुमायूँ ने चित्तौड़ की महारानी कर्णवती की राखी प्राप्त करके अपने सैनिकों के विरोध करने पर भी गुजरात के मुसलमान शासक को जो कि चितौड़ पर आक्रमण करने आया था। पहुँचकर उसके दांत खटटे किये तथा अपनी धार्मिक बहिन कर्णवती की रक्षा की इसलिए रक्षा बन्धन को भाई-बहिन का पवित्र त्योहार माना जाता है।

श्रावणी सुदी पून्यू को 'रक्षा-बन्धन' का त्योहार समस्त भारत में बड़े चाव से मनाया जाता है। भद्रा का समय छोड़कर प्रातः स्नान के बाद वेद विधि से 'रक्षा-बन्धन' करते हैं। सुन्दर रेशमी वस्त्र में केशर, चन्दन, चावल, दूब, सरसों, सोना रखकर सूत के रंगीन डोरें से बांधकर 'रक्षा' (राखी) बनाते हैं और मकान के शुद्ध स्थान में कलश आदि की स्थापना करके उस पर 'रक्षा' रखकर पूजन करते हैं। यह 'रक्षा' (राखी) रखकर पूजन करते है। यह 'रक्षा' (राखी) राजा, मंत्री, वैश्य अथवा शिष्य के दाहिने हाथ में बांधते हैं।

6. **गणेश चतुर्थीः-** गणेशजी देव समाज में सर्वोपरि है। गणेश चतुर्थी भाद्रपद शुक्ला को मनायी जाती है। गणेश बुद्धि के देवता है इनकी सवारी चूहे को माना जाता है। गणेश जी के रिद्धि और सिद्धि नाम की दो पत्नियाँ थीं। इनका सर्वश्रेष्ठ भोग लडडू हैं। इनके व्रत के दिन सुबह नहा धोकर सोने, ताम्बे की प्रतिमा बना लेनी चाहिए तथा कोरे कलश में जल भर कर मुंह बांध कर उस प्रतिमा को स्थापित किया जाता है फिर गणेंश जी की मूर्ति पर सिन्दूर लगाकर उनका पूजन किया जाता है। गणेश जी को प्रसाद अर्पित करके लड्डुओं के भोग को बाँट देना चाहिए। केवल दो लडडू गणेश जी प्रतिमा के पास रख देना चाहिए। गणेश जी की पूजा शाम को करनी चाहिए। इस दिन चन्द्रमा को अर्ध्य देकर ब्राह्मणों को भोजन करवाना चाहिए। भोजन के बाद उनकों श्रद्धानुसार दक्षिणा देनी चाहिए। गणेश जी का यह पूजन बुद्धि तथा विद्या एवं रिद्धि-सिद्धि की प्राप्ति के लिए किया जाता है।

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की चौथ को गणेश चतुर्थी का व्रत किया जाता है। प्रातः गणेश जी की मृत्तिका मूर्ति बनाकर श्रद्धावत हो पूजा करनी चाहिए। पूजन के समय मोदक का भोग लगाकर तथा हरित दूर्वा के 21 अंकुर लेकर उनमें से दो-दो करके इन दस नामों पर क्रमशः चढ़ाया जाता हैं:- गताधिप, गौरी सुमन, अधनाशक, एकदन्त, इशपुत्र, सर्वसिद्धिप्रद, विनायकः भगवन्त, कुमार गुरू, इभवक्त्राय, मूषक वाहन सन्त।

7. **कृष्ण जन्माष्टमीः-** जन्माष्टमी का त्योहार श्रीकृष्ण के जन्म दिन भाद्रपद कृष्णा अष्टमी को मनाया जाता हैं। भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म मथुरा नगरी के कारागृह में रात बारह बजे हुआ था। जब

श्रीकृष्ण ने देवकी के पेट से जन्म लिया तो जेल के सारे ताले स्वतः ही खुल गये थे। ऐसा कहा जाता है कि श्रीकृष्ण के जन्म के समय मथुरा में कंस ने त्राहि-त्राहि मचा रखी थी। कंस देवकी का भाई था। कहा जाता है कि जब श्रीकृष्ण ने जन्म लिया ही था तो कंस के लिए आकाशवाणी हुई कि देवकी का पुत्र ही उसका काल होगा। इसका पता जब कंस को लगा तो कंस ने देवकी के पुत्र श्रीकृष्ण को मारने का उपाय सोचा। लेकिन वासुदेव ने रात को ही श्रीकृष्ण का यशोदा तथा नन्द बाबा के पास वृन्दावन पहुंचा दिया। यशोदा श्रीकृष्ण का लालन-पालन बडे ही लाड़ प्यार से किया करती। कृष्ण थोडे दिन बाद वंशी बजाने लग गये। इनकी वंशी की इतनी मीठी धुन निकलती थी कि हर प्राणी बंशी तान सुनकर खुश हो जाता। कृष्ण बचपन से ही बडे चंचल एवं साहसी बालक थे। कंस को थोड़े दिन बाद पता चला कि कृष्ण वृन्दावन में रहता है तो कंस ने उनको मारने के लिए बहुत से राक्षस भेजे। लेकिन कृष्ण के पास एक राक्षस नहीं पहुँच पाता। अगर कोई पहुंच भी जाता तो वापिस नहीं आता था। कंस ने कृष्ण को मारने के बहुत उपाय कियें। लेकिन कंस सभी असफल रहे। कृष्ण बडे होकर नन्द बाबा की गायें चराने जाया करते थे। ओर वहां गोपियों से मक्खन छीन कर खाया करते थे। श्रीकृष्ण की बाललीलाएँ बडी लोकप्रिय थीं। श्रीकृष्ण ने ग्रामीण जीवन के लिए बहुत उत्थान किये। कंस को मार कर लोकप्रिय राज्य की स्थापना की। कृष्ण का विवाह रुक्मणी के साथ हुआ। थोड़े दिन बाद कृष्ण का उत्तर भारत की राजनीति में काफी प्रभाव बढ़ा। कौरव तथा पाण्डवों के बीच जो कुरुक्षेत्र मैदान में महाभारत का युद्ध हुआ। उसमें पाण्डवों की रणनीति का नेतृत्व भी श्रीकृष्ण ने ही किया था। अर्जुन का युद्धभूमि में मोह जाग्रत करने के लिए कृष्ण ने गीता का उपदेश दिया। जो भारतीय धर्म एवं संस्कृति का एक महान् ग्रन्थ है।

उत्तर भारत को छोड़कर थोडे दिन बाद श्रीकृष्ण द्वारिका में जाकर एक टापू पर बने हुये एक छोटे से मन्दिर में जाकर रहने लगे। कहा जाता है कि श्री कृष्ण का बचपन में बहुत नटखट स्वभाव था। इनकी बचपन की बाल-लीलाएँ बहुत विचित्र थीं। कहते हैं कि श्रीकृष्ण एक पेड़ के नीचे बैठे हुये थे कि एक शिकारी का तीर आकर उनके पैर में लग गया जिससे उनका स्वर्गवास हो गया।

श्रीकृष्ण का नाम जितना लोकप्रिय हुआ इतना किसी देवता का नहीं हुआ। लोग आज भी श्री कृष्ण की मूर्ति की पूजा करते हैं तथा हर परिवार में इनका यह जन्म दिन मनाया जाता है। इस दिन मन्दिरों में श्रीकृष्ण श्रेष्ठ योगी, चिन्तक एक दार्शनिक थे। उन्होंने उनके सिद्धियाँ प्राप्त कीं। वह आज भी सम्पूर्ण भारत में मानवता के लिए प्रेरणा का स्त्रोत है। आज भी हर वर्ष लोग जन्माष्टमी का त्योहार बड़ी धूम-धाम से मनाते है।

भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को कृष्ण जन्माष्टमी मनायी जाती है। इस दिन सवेरे से रात 12 बजे तक उपवास रखा जाता है। रात्रि बारह बजे कृष्ण का जन्मोत्सव धूमधाम से बनाया जाता है। दूध, दही, घी, शहद तथा तुलसी के पत्तों का पंचामृत्त और मिश्री का भोग-लगाकर धनिए व मिश्री की पंजीरी बांटी जाती है।

8. **विजयादशमी:-** विजयादशमी का त्योहार वर्षा ऋतु की समाप्ति तथा शरद् के आरम्भ का सूचक है। ये त्योहार उस जाति को नवस्फूर्ति, चेतना को प्रदान करता है। यह बात बहुत प्रसिद्ध है कि श्रावणी ब्राह्मणों का, विजय दशमी क्षत्रियों का, दीपावली वैश्यों का तथा होली शूद्रों का त्योहार है। इस प्रकार क्षत्रिय अपने अस्त्र-शस्त्रों की पूजा करते हैं। इसलिए विजयादशमी (दशहरा) राष्ट्रीय पर्व है।

इस दिन प्रातः काल देवी का विधिवत् पूजन करके नवमी विजया दशमी में विसर्जन तथा नवरात्र का पारण करना चाहिए। उपराहन वेला में ईशान दिशा में शुद्ध भूमि पर चन्दन, कुमकुम आदि से अष्टदल कमल का निर्माण करके सम्पूर्ण सामग्री जुटा कर अपराजिता देवी के साथ जया तथा विजया देवियों के पूजन का भी विधान है। शमी वृक्ष के पास जाकर विधिपूर्वक शमी देवी का पूजन करना चाहिये तथा उसकी जड़ की मिट्टी लेकर वाद्य यंत्रों सहित वापिस लौटना चाहिये। इस मिट्टी को किसी पवित्र स्थान पर रखना चाहिए। इस दिन शमी के कटे हुए पत्तों अथवा डालियों की पूजा नहीं करनी चाहिए।

बंगाल में यह त्योहार बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। इस दिन बंगाली लोग काली देवी की पूजा

www.ignited.in

करते है तथा बकरे काटकर देवी पर चढाते हैं तथा मांस को प्रसाद के रुप में बांटते हैं।

ऐसा कहा जाता है कि इस दिन मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र ने रावण का वध करके उस पर विजय प्राप्त की थी। लेकिन इस को भी असत्य माना जाता है। बताया जाता है कि वाल्मीकि रामायण जो भगवान रामचन्द्र के इतिहास के विषय में सबसे अधिक प्रामाणिक ग्रन्थ समझा जाता है, उसके अनुसार आश्विन सुदी दशमी को महाराज रामचन्द्र ने मम्पापुर से लंका की ओर प्रस्थान किया था और चैत्र कृष्णा अमावस्या को रावण का वध किया था। इस तथ्य की पुष्टि रामायण से होती है। लेकिन आज के दिन रावण वध करने की परिपाटी पड़ गई क्योंकि वैदिक युग की समाप्ति और पौराणिक युग के आरम्भ होने पर महापुरुषों में अभिनय खेलने की प्रथा पड़ गई। राजा महाराजा तथा सभी क्षत्रियगण एवं समस्त जनता आज के दिन पर्व तथा उत्सव को मनाती ही थी। इस दिन नाटक विशेष रुप से किये जाने लगे। संसार के महापुरुषों में भगवान रामचन्द्र का जीवन सर्वश्रेष्ठ और मर्यादाओं में दीप्तिमान था, और आज के दिन उन्हेंाने रावण पर विजय प्राप्त करने के लिए पम्पापुर से लंका के लिए प्रस्थान किया तो लोगों ने आज के दिन ही नाटक द्वारा बड़े उत्साह के रुप में रावण का पुतला बनाकर उसको जलाना आरम्भ कर दिया और आज के दस दिन पूर्व से भगवान रामचन्द्र का सम्पूर्ण जीवन चरित्र अभिनय द्वारा ही दिखाना आरम्भ कर दिया। बहुत लोग इस पर्व को भगवती “विजया” के नाम भी “विजयादशमी” कहते हैं। साथ ही इस दिन भगवान रामचन्द्र जी चौदह वर्ष का वनवास भोगकर तथा रावण का वध करके अयोध्या में पहुंचे थे। इसलिए भी इस पर्व को विजयादशमी कहते है। ऐसा भी माना जाता है कि आश्विन शुक्ला दशमी को तारा उदय होने के समय “विजय” नामक काल होता है। यह काल सर्वकार्यसिद्धिदायक होता है।

आश्विन मास में शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि को विजयादशमी का पर्व मनाया जाता है। पर्व तो क्षत्रियों का है लेकिन अब इसे सभी लोग मनाते हैं।

9. **करवा चौथ -** करवाचौथ कार्तिक के माह में आती है इसका व्रत सौभाग्यवती औरतें अपने सुहाग, पति के स्वास्थ्य, आयु की शुभकामनाओं के लिए करती हैं। इस व्रत को करने वाली औरतों को सुबह जल्दी शौच आदि करके पति-पुत्र, सुख-सौभाग्य की इच्छा का संकल्प लेकर इस व्रत को करना चाहिए। कहते हैं इस व्रत में शिव, पार्वती, स्घामी कार्तिकेय गणेशजी तथा चन्द्रमा का पूजन जरुर करना चाहिए तथा चन्दा उगने के बाद चन्द्रमा के दर्शन करके जल का अर्घ देना चाहिए तथा बाद में भोजन करना चाहिए। पूजा पाठ के बाद मिट्टी के करवे में चावल, उड़द की दाल तथा सुहाग की सामग्री तथा रुपया रखकर दान करना चाहिए तथा अपनी सासूजी के चरण स्पर्श करके उनका मुहं मीठा करवा करके आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिए।

10. **धनतेरस:-** धनतेरस कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को मानी जाती है। इस दिन वैदिक देवता यमराज का पूजन किया जाता है। लोग इस दिन आटे का दीपक बनाकर यम के लिए अपने दरवाजे पर रखते है तथा यम का पूजन रोली, चावल, गुड़ आदि से करते है। इस दिन लोग बहुत तादाद में बर्तन खरीदने बाजार में जाते हैं इस दिन धनवंतरि के पूजन का भी विशेष महत्व मानते हैं। आज के दिन चाँदी के बर्तनों को खरीदना शुभ माना जाता है इस दिन किसानों को अपने हल जूती, व मिट्टी को दूध में भिगोकर उसमें सेमर की शाखा लगाकर तीन बार अपने शरीर पर फेरना चाहिये। उस दिन स्नान करके मन्दिर कुओं आदि पर दीपक जलाना चाहिए।

11. **छोटी दीपावली:-** यह कार्तिक सुदी चौदस के दिन बड़ी मनायी जाती है। इस दिन सुबह उठकर आटा, तेल, हल्दी से उबटन करना चाहिए। भोजन करने से पहले इस प्रकार पूजा करनी चाहिए - एक थाली में 1 चौमुखा दीपक और 16 छोटे दीपक रखकर उनमें तेल और बत्ती डालकर जला देते हैं। फिर रोली, खीर, गुड़ धूप, अबीर, गुलाल तथा फूल आदि से पूजा की जाती है।

12. **बड़ी दीपावली:-** कार्तिक मास की अमावस्या के दिन दीपावली मनाई जाती है। इस दिन भगवती महालक्ष्मी का उत्सव बड़े धूमधाम के साथ मनाया जाता है। जिस प्रकार रक्षा-बन्धन ब्राहमणों का, दशहरा क्षत्रियों का, होली शूद्रों का त्योहार है, उसी प्रकार दीपावली वैश्यों का त्योहार माना जाता है। घरों को अच्छी तरह से सजाकर घी के दीपों की

रोशनी की जाती है। बच्चे उमंग में भरकर आतिशबाजी (सुर्री, पटाखे) छोड़ते हैं तथा जो पूजा छोटी दिवाली को की जाती है, वैसे ही धूप-दीप बड़ी दिवाली को किया जाता है। शाम को पहले पुरूष फिर स्त्रियां घर की पूजा करती हैं। पूजन के पश्चात् सब दीपकों को घर में अलग-अलग प्रत्येक स्थान पर रख देते हैं। गणेश जी तथा लक्ष्मी जी के आगे चौक पूरकर धूप दीप कर देते हैं।

13. **गोवर्धन पूजा (अन्न कूट):-** कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा को (दीवाली के दूसरे दिन) अन्नकूट उत्सव मनाया जाता है। इस दिन गोबर की प्रतिमा बनाकर पूजा की जाती है तथा अन्नकूट चढाकर भोग लगाया जाता है। इस दिन मन्दिरों में विविध प्रकार की खाद्य सामग्रियों से भगवान को भोग लगाया जाता है। इसके पीछे श्री कृष्ण द्वारा ब्रजवासियों को इन्द्र के कोप से बचाने के लिए गोवर्धन पर्वत को अपनी कनिष्क उंगली पर उठाने की कथा जुड़ी हुई है साथ ही साथ गौ माता के प्रति सहानुभूति एवं दया की भावना को भी विकसित करने में इस पर्व का महत्वपूर्ण योगदान है।

14. **भैया दूज:-** यह त्योहार भाई तथा बहिन का प्रेम का त्योहार माना जाता है। यह कार्तिक ‘शुक्ला द्वितीया के रोज माना जाता है। इस दिन बहिन अपने भाइयों से मिलने मायके आती है तथा अपने भाईयों के स्वस्थ तथा दीर्घायु होने की मंगल कामना करती है। इस दिन बहिन अपने भाई को अपने हाथों से स्नान करवाती है। इस दिन बहिन अपने भाई अपने घर जीमाती है। इस दिन भोजन में चावल खिलाने चाहिए तथा उसको गोला देना चाहिए। बहुत सी जगह इस दिन गोधन कूटने की प्रथा भी है। गोबर की मानव मूर्ति बनाकर उसकी छाती पर ईट रख कर औरते मूसलों से कूटती है तथा औरत घर-घर जाकर चना, तथा मटकैया चराव कर जिल्वा को भैटकैया के कांटे से दागती भी हैं।

15. **मकर सक्रान्ति -** पृथ्वी सूर्य के चारों और तीन सौ पैंसठ दिन में एक चक्र लगाती है। उसे “सौर वर्ष कहते हैं। पृथ्वी का गोलाई में सूर्य के चारों और घूमना क्रान्ति चक्र कहलाता है। इस परिधि को बारह नक्षत्रों के अनुरूप हुआ राशियाँ बनी हैं। इन राशियों का नामकरण बारह के अनुरूप हुआ है तथा पृथ्वी का एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश संक्रान्ति कहलाता है। सूर्य के उत्तरायण को मकर संक्रान्ति तथा दक्षिणायन होने को कर्क संक्रान्ति कहते हैं। श्रावण से पोश माह तक सूर्य का उत्तर के अन्तिम छोर से दक्षिण के अन्तिम छोर तक जाना देना। गायन ताथ माघ से आषाढ़ तक दक्षिण के अन्तिम भाग से उत्तर के अन्तिम भाग तक जाना उत्तरायण कहलाता है। उत्तरायण में दिन बडे हो जाते हैं तथा प्रकाश बढ़ जाता है। राते दिन की अपेक्षा छोटी लगती है। दक्षिणायन में इसके ठीक विपरीत होता है। शास्त्रों के अनुसार उत्तरायण की अवधि देवताओं का दिन तथा दक्षिणायन देवताओं की रात्रि कहते हैं। इस प्रकार मकर संक्रान्ति देवताओं के दिन का प्रभात काल हैं। वैदिक काल में उत्तरायण को देवपान तथा दक्षिणायन को पितृपान कहा जाता था। मकर संक्रान्ति के दिन यज्ञ में दिये गये द्रव्य को ग्रहण करने के लिए धरा पर अवतरित होते है। इसी मार्ग से पुण्यात्मा पुरुष शरीर छोड़कर स्वर्गादि दिव्य लोकों में प्रवेश करते है। इसलिए यह आलोक का अवसर माना गया है। धर्मशास्त्रों के कथानुसार इस दिन पुण्य दान, जम तथा धार्मिक अनुष्ठानों का अत्यन्त महत्व है। इस अवसर पर दिया हुआ दान पुनर्जन्मा होने पर सौगुणा होकर प्राप्त होता है।

यह त्योहार भारत के प्रत्येक कोने में मनाया जाता है। इस त्योहार की पूजन पद्धति में शीत की अतिशयता से छुटकारा पाने का विधान अधिक है। इस त्योहार पर तिल का अधिक महत्व माना जाता है। तिल खाना तथा बांटना इस त्योहार की महानता है। शीत के निवारण के लिए तिल, तेल तथा तूल का अधिक महत्व है।

उत्तर प्रदेश में इस त्योहार को खिचड़ी के नाम से पुकारते हैं। इस दिन खिचड़ी चने का तथा खिचड़ी तिल का दान देने का विशेष महत्व है। महाराष्ट्र में इस दिन-तालू-गूल नामक हलवे के बांटने की प्रथा है। इस दिन महिला समाज परस्पर गुड़ तिल, रोली आदि बांटती है। बंगाल में भी इस दिन स्नान करके तिल-दान करते है। हिमाचल, हरियाणा तथा पंजाब में मकर संक्रान्ति एक दिन पूर्व यह त्योहार लोहड़ी के रुप में मनाया जाता है। गंगासागर में इस दिन बहुत बड़ा मेला लगता है। कहते हैं कि इसी दिन मैया यशोदा ने कृष्ण को अपने पुत्र के

रुप में प्राप्त किया था। इसलिए आज का दिन बडी धूम -धाम से मनाया जाता है।

पौष के महिने में एक बड़ी संक्रान्ति होती है। वैसे संक्रान्ति हर महीने में होती है परन्तु कर्क, मकर राशियों पर सूर्य जाने पर विशेष महत्व होता है। तिथि के अनुसार मकर संक्रान्ति हमेश 14 जनवरी को ही होती है।

संक्रान्ति के एक या दो दिन पहले सफेद तिल का, काले तिल का, आटे का, गुड़ और दाने के लड्डूओं का दान किया जाता है। बायना निकालने के लिए काले तिल में दक्षिणा डालकर ब्राह्मण को दान कर मेंहदी मंडाते हैं।

माघ मास की संक्रान्ति को सूर्य उत्तरायण होता है। अतः सूर्य की पूजा की जाती है तथा नदियों व पवित्र सरोवरों में लोग स्नान करते हैं। इस दिन मल मास समाप्त हो जाता है और नये कार्य का श्रीगणेश किया जाता है। तिल के व्यंजन सहित दाल-बाटी एवं खिचड़ी खाई जाती है। जयपुर सहित सभी बड़े शहरों के लोग पतंगबाजी का आनन्द लेते हैं।

16. **बसंत पंचमी:-** यह उत्सव ऋतुराज बसंत के आगमन में माघ सुदी पंचमी को मनाया जाता है। किसानों के घर में लक्ष्मी का आगमन हो जाता है और प्रकृति धानी रंग की साड़ी पहनकर फूलों से लदकर मादक रूप धारण करती है। इस दिन भगवान विष्णु तथा सरस्वती पूजन का विशेष विधान है।

17. **महाशिवरात्रि:-** फाल्गुन कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को शिवरात्रि का महोत्सव मनाया जाता है। शिवरात्रि में शिवजी-पार्वती जी की पूजा की जाती है। ऐसा माना जाता है कि शिवजी पर पका आम चढ़ाने से विशेष फल की प्राप्ति होती है।

18. **होली का बड़कुल्ला:-** यह त्योहार होली के पन्द्रह दिन पहले कोई शुभ दिन देखकर मनाया जाता है इस दिन बाय के गोबर सेसात बड़कुल्ला (गुलरी) बनाये जाते हैं। यदि किसी के यहां बेटा हुआ होता है या बेटे के विवाह के कोई उजमन होता है तो तेरह गोबर की सुपाड़ी भी बनाई जाती है। इसका उजमन करने से घर में सुख-समृद्धि प्राप्त होती है।

19. **होली पर्व:-** होली एक सामाजिक पर्व है। यह रंगों का त्योहार है। यह त्योहार फाल्गुन में पूर्णिमा के दिन मनाया जाता है। सभी नर-नारी, बुढ़े, बच्चे, इस त्योहार को बडे उत्साह से मनाते हैं। इस राष्ट्रीय त्योहार में वर्ण अथवा जाति भेद भाव नहीं होता हैं इस दिन शाम को सभी भद्रारहित लग्न में होलिका का दहन करते है। भद्रा में होलिका जलाने से राष्ट्र में विद्रोह होता है। नगर में अषान्ति रहती है। वैदिक काल से इस पर्व को “नवान्नेष्टि” कहा जाता था। खेत से अधकच्चे तथा अधपके अन्न को होली कहते हैं। इसी से इसका नाम “होलिकात्सव” पड़ा। “होलिकाउत्सव” मनाने के संबंध में अनेक मत प्रचलित हैं। कुछ लोग इस पर्व को अग्नि देव का पूजन मानते हैं। इस पर्व को “नवसंवत्सर” का आरम्भ भी कहते है। तथा बसन्तागमन के उपलक्ष्य में किया हुआ यज्ञ भी माना जाता है। इस दिन मनु का जन्म भी हुआ था इसलिए इसे पन्वादितिथि भी कहते है वैसे इस त्योहार का विशेष संबंध प्रहलाद से है। हिरण्यकशिपु ने प्रहलाद को मारने के लिए अनेक उपाय किए। पर मरा नहीं हिरण्यकशिपु की बहिन होलिका को अग्नि में न जलने का वरदान था। हिरण्यकशिपु ने उस वरदान का लाभ उठाया। प्रहलाद को होली की गोद में बिठाकर उनके ऊपर लकड़ियों का ढेर लगवा दिया तथा उसमें आग लगवा दी। दैवयोग से प्रहलाद तो बच गया। लेकिन होलिका भस्म हो गई। तभी से भक्त प्रहलाद की स्मृति में इस पर्व को मनाते हैं। त्योहार को हिरणाकुश की बहिन दुण्डा की स्मृति में मनाने का मत भी प्रचलित है। बहुत से लोग इस पर्व का संबंध कामदहन से कहते हैं। जब भगवान शंकर ने अपनी क्रोधाग्नि से कामदेव को भस्म कर दिया था तभी से इस त्योहार का प्रचलन हुआ। भारत के कई प्रदेशों में होलाष्टक के शुरु होन पर एक पेड़ की शाखा काट कर उनमें रंग-बिरंगे कपडों के टुकडे बांध देते हैं। हर मनुष्य इस शाखा में एक एक कपड़ा बांधता हैं। इस शाखा को जमीन में गाड़ दिया जाता है। लोग इसके नीचे मस्त होकर गाते बजाते तथा नाचते हैं। एक-दूसरे पर रंग, अबीर तथा गुलाल आदि डालते है। इस दिन आ़म मंजरी तथा चंदन को मिलाकर खाने का बडा़ महत्व है। कहते है। फाल्गुन पूर्णिमा के दिन जो लोग चित्त को एकाग्र करके हिडोंले में झूलते हुये श्री गोविन्द पुरुषोत्तम

www.ignited.in

के दर्शन करते हैं वे निश्चय ही बैकुण्ठ लोक को जाते हैं।

भविष्य पुराण के अनुसार नारद जी ने महाराज युधिष्ठर से कहा! फाल्गुनी पूर्णिमा के दिन सब लोगों को अभयदान देना चाहिए और होली को गांव के बाहर दहन करवाने से रक्षसों का नाश होता है। होली सम्मिलन, मित्रता तथा एकता का पर्व है। इस दिन सभी लोग रंग-बिरंगे नजर आते है। फाल्गुन मास के अंतिम दिन होलिका दहन के रूप में मनाया जाता है। इस दिन होली जलायी जाती है। डंडी होली का पूजन किया जाता है तथा जल, माला, नारियल आदि चढ़ाते हैं तथा परिक्रमा लगाई जाती है। पापड़, बूट आदि होली जलने पर भून लेते हैं और उनको सबको बांटकर खाते हैं।

20. **धूलण्डी या छारेड़ी (धूलिका पर्व):-** चैत्र मास कृष्ण पक्ष प्रतिपदा को होली के बाद धूलिका त्योहार मनाया जाता है। इस दिन होली की अवशिष्ट राख की वंदना की जाती है। वैदिक मंत्रों से अभिसिक्त उस राख को सभी लोग मस्तक पर लगाते हुए एक दूसरे से प्रेम पूर्वक मिलते हैं। दिन की दूसरी बेला में रंग, गुलाल, अबीर, कुमकुम व केसर की सावनी लगाई जाती है।

21. **बुद्ध पूर्णिमा:-** बैसाख महीने की पूर्णिमा के नाम से जाना जाता है। बौद्ध धर्मावलम्बियों के लिए इस पूर्णिमा का विशेष महत्व है, क्योंकि इस दिन महात्मा बुद्ध का जन्म हुआ था, इसी दिन उनको ज्ञान प्राप्त हुआ था एवं इसी दिन उनका निर्वाण हुआ था। बुद्ध का जन्म ईसा पूर्व 544 में हुआ था। इनके पिता शुद्धोधन, शाक्य गणराज्य के सूर्यवंशी राजा थे। बुद्ध की माता का नाम महामाया था। इनका बचपन का नाम सिद्धार्थ था। इनके जन्म के सात दिन बाद ही इनकी माता का निधन हो गया। प्रारम्भ से ही ये गम्भीर प्रवृति के थे। सदैव ही ये एकान्त में सोच विचार में मग्न रहते थे। एक बूढ़े सन्यासी ने इन्हें देखकर भविष्यवाणी की थी कि यह बालक दुनिया का उद्धार करने आया है। बडे होने पर इनका विवाह यशोधरा से कर दिया गया, लेकिन इनका गृहस्थी में मन नही रमा।

बुद्ध पूर्णिमा के दिन लोग स्नान करके श्वेत वस्त्र धारण करते है। मन्दिरों में जाकर उपदेश सुनते हैं। भिक्षुओं को दान देते हैं। पंचशील ग्रहण करते है, अर्थात चोरी, झूठ, नशा, जीव हिंसा, व्यभिचार से दूर रहने की प्रतिज्ञा करते है। इस दिन लोग मांस-मंदिरा का सेवन नहीं करते। पक्षियों को दाना डालते है, प्यासों को पानी पिलाते है। वे सभी तरह का दान-पुण्य के कार्य करते है। जापान मे मन्दिरों मे फूलों के छोटे-छोटे मन्दिर बनाकर उनमें प्रतिष्ठित बुद्ध की मूर्तियों का अभिषेक किया जाता है। इस प्रकार बुद्ध पूर्णिमा को बड़े उत्साह के साथ विभिन्न तरीकों से मनाया जाता है।

22. **गुरु पूर्णिमा -** आषाढ़ शुल्क पूर्णिमा के दिन गुरु पूर्णिमा मनाई जाती है। महर्षि व्यास की स्मृति में यह पूर्णिमा मनाई जाती है। महर्षि व्यास, सम्पूर्ण जगत के गुरु माने जाते है। गुरु के रूप में उन्होंने संसार को जो ज्ञान दिया वह दिव्य है। उन्होंने ही वेदों का 'ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद' के रुप में विधिवत वर्गीकरण किया। ये वेद हमारी संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैं, ज्ञान का अथाह भण्डार हैं, जिनके अनुसार जीवन व्यतीत करके मनुष्य सुख-शान्ति एवं मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

23. **शरद उत्सव -** शरद उत्सव का हमारे धर्म और संस्कृति से गहरा संबंध हैं प्राचीन काल से सूर्य, चन्द्रमा और इन्द्र की देवताओं के रुप में स्वीकार करके पूजा की जाती है। चन्द्रमा शान्ति एवं शीतलता का प्रतीक भी माना गया है। इस उत्सव के दिन बहुत सी जगह कवि सम्मेलन का आयोजन किया जाता है। संस्कृत-साहित्य में चन्द्रमा एवं उससे सम्बन्धित साहित्य हमे विषद रुप में उपलब्ध होता है। वैदिक एवं तथा पौराणिक साहित्य में चन्द्रमा के संबंध में अनेक प्रसंग एवं कथाएँ संकलित है जिनसे लोक-विश्वास की जानकारी होती है। कालिदास एवं अन्य संस्कृत कवियों की रचनाओं में चन्द्रमा एवं उसके विविध प्रभावों का भी वर्णन मिलता है। प्रकृति वर्णन और उसका मानवीय मन पर प्रभाव चित्रित करने में संस्कृत कवियों को कमाल हासिल था।

शरद पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा अपनी पूर्ण कलाओं के साथ अवतरित होता है। लोग ऐसा कहते है कि इस दिन रात्रि में अमृत की वर्षा होती है। इस दिन लोग अत्यधिक खुश होते है। शरद पूर्णिमा का त्योहार एक महत्वपूर्ण त्योहार हैं इस दिन से स्त्रियाँ कार्तिक नहाना शुरु कर देती है। यह त्योहार सभी क्षेत्रों में मनाया जाता है। इस उत्सव के दिन

किसी तरह का भेदभाव नहीं माना जाता है। इसी दिन कीर्तन आदि का आयोजन करना चाहिए तथा शुद्व दूध की खीर बनाकर थोड़ी देर चांदनी मे रखनी चाहिए। तथा बाद में उसे प्रसाद के रुप में बाँट देना चाहिए। चन्द्रमा को इस दिन जल से अर्घ देना चाहिए। आज के दिन अनेक उत्सव एवं व्रत चन्द्रमा से संबंधित किए जाते है। इस दिन औरतें अपनी मनोकामनाओं को पूर्ण होने की आशा प्रकट करती हैं। चन्द्रमा प्रेम पूजा का आधार रहा है। यह उत्सव बडे उत्साह प्रेम के साथ मनाया जाना चाहिए।

24. **नाग पंचमी -** नाग पंचमी की श्रावण में शुक्ला पंचमी के दिन मनाई जाती है। इस दिन नाग की पूजा की जाती है। इस दिन नाग के दर्शन करना बहुत शुभ माना जाता है। इस दिन सांप को मारना पाप होता है तथा श्रावण में धरती खोदना भी निषिद्व है। इस दिन व्रत करके सांपों को खीर व दूध पिलाया जाता है तथा सफेद कमल पूजा में रखा जाता है एवं सोने, चांदी काठ व मिटटी की कलम से हल्दी व चन्दन की स्याही से पाँच फन वाले नाग का चित्र बनाना चाहिए और उसकी पूजा करना चाहिए तथा सपेरों को बुलाकर सापों के दर्शन करने चाहिए। बहुत सी जगह सांपों के बिलों की पूजा गुड़ चना आदि से की जाती है तथा उसके बाद कथा सुनाते हैं।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि हिन्दू संस्कृति में उनके पर्व एव त्योहार का विशिष्ट महत्व है। ये पर्व एवं त्योहार किसी भी श्रेणी में क्यों ना हों उनका बाहय रुप कैसा भी क्यों ना हों किन्तु उनका वास्तविक उद्देश्य जन साधारण में धार्मिक सामाजिक और अध्यात्मिक चेतना का जागृत करना मात्र है। किसी भी देश के पर्व-त्योहार का मात्र यहीं औचित्य है कि इन के द्वारा उनकी वास्तविक संस्कृति के दिग्दर्शन होते है और इसके माध्यम से उस देश की विशेष संस्कृति का एक वास्तविक स्वरुप जन साधारण के सम्मुख प्रकट होता है मानव समाज की सफलता के लिए जहाँव्यक्तिगत उन्नति और सत्प्रवृत्तियों को ग्राहय करने की आवश्यता है वहीं सामाजिक संगठन सुदृढ़ बनाना और सामुदायिक सहयोग की भावना का विकास करना भी है। भारतीय संस्कृति में जितने भी पर्व-त्योहार का नियोजन किया गया हैं। उसका एक मात्र उद्देश्य है कि लोग आपस में प्रेमपूर्वक जीवन यापन करते हुए परस्पर सहयोग की भावना को विकसित करें। हमारे देश भारत में पर्वो और त्योहार की परम्परा अति प्राचीन काल से चली आ रही है जो विभिन्न ऋतुओं में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में सभी समुदायों के द्वारा पूर्ण उल्लास और प्रसन्नता के साथ मनाये जाते है। हिन्दू धर्मावलम्बियों के द्वारा मनाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के पर्व-त्योहार का अपना एक अलग महत्व व विशिष्ट पहचान हैं।

संदर्भ

1. शर्मा शंकरदयाल - संस्कृति और शिक्षा, पंकज पुस्तक मंदिर, दिल्ली।
2. चतुर्वेदी शुभ्रा - शिक्षा के रुप एवं सांस्कृति धरोहर, जयपुर।
3. गुप्त एन.एल. - संस्कृति के लात सौपान, राधा पब्लि0 दिल्ली।
4. अग्निहोत्री यमुनासिहं - दिन-दिन पर्व, नेशनल पब्लि., दिल्ली।
5. मिश्रा सुनील - हिन्दूओं के व्रत एवं त्योहार, अरुण प्र. दिल्ली।
6. सिंह हरिहर - हमारे पर्व एवं त्योहार, अरुण प्रकाशन, दिल्ली।
7. कुमार विनय - भारतीय पर्वो की वैज्ञानिकता, सेठी प्रका., बरेली।
8. चौधरी सुनीता - राष्ट्रीय उत्सव एवं जयन्तियाँ, अनु प्रका. जयपुर।
9. व्यास निर्मला - आओं पर्व मनायें, शिल्पी प्रकाशन, जयपुर।
10. जैन रोशन लाल - हमारे पर्व त्योहार, देवनागर प्रका. जयपुर।

Corresponding Author

Manish Kumar*

Research Scholar, R. R. B. M. University, Alwar, Rajasthan